अंतरा-शब्दशक्ति

तूफान से आशनाई

काव्य संग्रह

शुभ्रा झा

तूफ़ान से आशनाई

(काव्य संग्रह)

शुभ्रा झा

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

वारासिवनी, मध्यप्रदेश

ISBN- 978-93-86666-55-0

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन
मुख्य कार्यालय - १५ नेहरु चैक वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र) ४८१३३१
शाखा- एस-२०७, नवीन भवन, इंदौर प्रेस क्लब परिसर, इंदौर (म.प्र.) ४५२००१
दूरभाष- (कार्या.) ०७६३३-२५३१५९ (मो) ९४२४७६५२५९
अणुडाक- antrashabdshkti@gmail.com
अंतरताना- www.antrashabdshakti.com

प्रथम संस्करण २०१८- शुभ्रा झा
मूल्य - ५५.०० रुपये
आवरण चित्र- संदीप सोनी, वारासिवनी
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

Tufanon me Aashnai By Sgubhra Jha

वैधानिक चेतावनी - इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरुत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

भूमिका

कविताएँ मेरे लिए बस साहित्य का एक अंग नहीं बल्कि जीवन को सही ढ़ग से जीने का ज़रिया है।मेरी हरेक कविता मेरे रोजमर्रा के जीवन से जुड़ी हुई है।

"तूफ़ान से आशनाई" की सभी कविताएँ भी मेरे जीवन के प्रति मेरे संघर्ष को दर्शाती है।

औरत के जन्म से लेकर उसकी मृत्यु तक हरेक दिन चुनौती बन ललकारती है और मेरा यह मानना है कि जब तक तूफ़ान से सामना न हो जीवन को जीने का सही मजा नहीं मिलता।

ऐसा भी क्या जीना जहाँ जीवन मे उतार चढ़ाव न हो, धूप न हो, तेज हवा के थपेड़े न हो, थोड़े आँसू न हो। जीवन की मुश्किलें मनुष्य को मजबूत बनाती है।

मेरी कविताएँ उन सभी के लिए जिन्होंने तूफ़ान से आशनाई की है कभी न कभी।

शुभ्रा झा

दरभंगा,बिहार

अनुक्रमणिका

1.	नया गगन	7
2.	किरदार	8
3.	गूंगे कपड़े	9
4.	वो सावन	10
5.	प्रिय मिलन	11
6.	यात्रा	12
7.	विद्यालय कैसे जाऊँ	13
8.	दो घूँट बचपन के	14
9.	परछाई	15
10.	धैर्य	16
11.	रिश्ते	17
12.	खुशबू	18
13.	सहेजता पल	19
14.	मुझे समझ नहीं आता	20
15.	मेरी नाराजगी	21
16.	फिर एक बार	22
17.	आखिर कब तक	23
18.	कहाँ जा रही है औरतें	24
19.	बोझ	26

20. जन्नत 28

21. प्रार्थना 30

22. लड़कियाँ या मछलियाँ 31

23. इज़हार 32

नया गगन

जीवन पथ पर भटका मेरा मन
था देख रहा नित नव दर्पण।
औरों के कृत्रिम नयनों में
अपनी छाया का नया गगन।

यश-अपयश की सीमाओं में
खुद की सारी सीमाएँ भूल
प्रियवर के बने पैमाने जो
चुभते थे बनके हृदय शूल।

भयभीत हृदय को एक दिवस
धर कर मेरा इस पथ पर लाए
सारी उलझन व्याकुल मन की
तुम प्रेम सुधा से सुलझाए।

कल तक जग जो अनजाना था
वह विस्तृत नभ अब मुझे मिला
तुमने उस पथ पर दिया बढ़ा
अनुपम नवजीवन मुझे मिला।

है चहुँ ओर जुगनू सारे
पथ पर फैलाते हुए प्रकाश
है आज प्रकाशित मार्ग मेरा
नव धरा मिली औ नव आकाश।

खूद को जाना और पहचाना
अपनी शक्ति अपना सामर्थ्य।
उड़ जाऊं नभ में बन कर खग
अब पा जीवन का नया अर्थ।

है कठिन मगर ये राह बहुत
संघर्षो से कब डरना है
जिस पथ पर तुमने खड़ा किया
इक चिन्ह उसी का बनना है।

किरदार

भय पैदा होता है
जब भी
किसी विशिष्ट किरदार को
निभाने हेतु
ढालती हूँ खुद को
किसी ढांचे में।
घिरता है मन
अनजाने भय से
तोड़ कर ढ़ांचा जब भी
चाहे मन मुक्त होना
फिर से घिर जाती
एक नए ढ़ांचे से।
अनवरत चलते
इस चेतन अचेतन क्रिया से
उपजी स्व की भावना।
तादात्म्य स्थापित करने हेतू
घिर आए नए भंवर मे
उलझ कर खो जाता मन
अपने नए किरदार में
प्रतिक्रिया,
प्रत्युत्तर,
स्मृतियों से परे
मुक्ति पाने को मन ।

गूंगे कपड़े

कहाँ होती है कपड़ों की कोई बोली
होती कहाँ उसकी कोई भाषा
रोजमर्रा की जगहों जैसे
सड़क,स्कूलों रेस्तराओं में
पहने जाने वाली पोशाकें
कैसे बन जाती
बलात्कार का सबब।

कहाँ बताती पोशाकें
पहने जाने वाले की इच्छाएं
फिर क्यों औरतों के कपड़ों को
अपने लालसाओं के अनुरुप
गढ़ लेता है यह पुरूष मन।

जन्म से लेकर बढ़ती उम्र संग
औरतों के कपड़ों की तरह
पुरुष की नजर में भी
क्यों नहीं बढ़ती औरतों के
प्रति सम्मान
कपड़े कभी नहीं करते
निमंत्रण भरा संवाद
न ही मन के छुपे भाव को
उजागर करते।

नारी विद्वेष से प्रेरित पुरुष मन
बड़ी आसानी से कपड़ों पर
दोष मढ़ चालाकी से छुपा लेते
अपनी ओछी मानसिकता।

वो सावन

ये क्या है असर
आज की बारिश में
तुम तक मुझे ले जाती
या तुम हो तो ये भाती
भींगो कर मेरे हर पोर को
कुछ सुखा कतरा छोड़ देती
जैसे इसे भी इंतजार है तुम्हारा
बूँदें भी ये जानती है
घनीभूत पीड़ा से गुजरते लम्हें
सिमट कर कैद है बस एक
छुअन में तेरे
पिघलते ज़िस्म में घुल जाएंगी
चट्टानों सी रूखी सूखी पपडियां
गल कर बहा ले जाएँगी
वो सारे दाग चितकबरे।
भाप बन उड़े जो
रंग जीवन के और
जा मिलेंगे घुल के समुन्दर में
एक बार फिर से लिखुंगी
मैं अपने कोरे मन पर
कोई सप्तम कविता
बस वो आ जाए सावन
साथ लाए जो तुम्हारी खुशबू।

प्रिय मिलन

दुःख से व्यथित
पंकिल काया
आविल मन पे
विरह की छाया।
मैं कण कण ही मुरझाऊं प्रिय।

आश मिलन हो हृदय संग
संचित नव मन सित
भर पद मैं वारी जाऊं
हो जैसे वन मीलित।
मैं मंद मंद मुस्काऊँ प्रिय।

तारक लय सज्जित नयनाभिराम
पुलकित वसन्त हो रजनी
नाच रही पा के संदेशा
मेरे पैरों तले की अवनी।
मैं खड़ी खड़ी गिर जाऊं प्रिय।

कंचन काया गई सिहर सिहर
मलयानिल जब चले अलि
अभिसार करने को आतुर
व्याकुल मन रोमावलि।
मैं प्रेम में तेरे रीत जाऊं प्रिय।

यात्रा

क्यों आज रोता यूँ खड़ा
जो रह गया पीछे कहीं
है सामने आती प्रभा
नव पुष्प बागों में खिली।

जो रह गया वो छिन्न है
मन व्यर्थ ही विखिन्न है
लाती है नव चेतना
वो आ रही मुस्कान है।

थे सुखद पल जो छुट गए
क्यों व्यर्थ में मंचन करूँ मैं
है न्याय क्या बीते समय को
भविष्य पथ पे गहु मैं।

वो चुभ गए थे पाँव में
दे हृदय को आघात जो
सीखती रही उन्हीं से मैं
थी मेरे लिए अभिशाप जो।

मन में बसे सब राग बन
यात्रा में जो गाते रहे
कुछ दुःख मिले कुछ सुख मिले
बन फूल राह बिखरे रहें।

हूँ यात्री मैं अनवरत चलूँगी
कर्म पथ को यूँ धरे
अब पाप पुण्य के तराजू
रखुँगी अपने से परे।।

विद्यालय कैसे जाऊँ

सुना है उस घर में
बसती है विद्या की देवी
देती है नित ज्ञान की ताकत
मिलती वहाँ हौसलों को उड़ान
मिलती वहाँ अपनी पहचान।

गई थी मैं भी वहाँ
सखी संग सहेली
थोड़ी सहमी थोड़ी डरी
थी बड़ी अकेली
मिला बहुत कुछ जानने को
देखा नयनों को फाड़।
कितना कुछ छिपा हुआ
सुंदर है यह संसार।

नई अब भाषा नई है बोली
सीखा पढ़ना लिखना
और सीखा मैंने वहाँ
लघुशंका को दबाना।
नहीं उचित उपाय वहाँ है
कोई लकड़ी के लायक
कैसै जाऊँ रोजाना पढ़ने
नहीं है कोई सहायक

छोड़ पढ़ाई घर भागी आती
लघुशंका के कारण
पूछे अम्मा और बाबा जब
क्या बताऊँ अब कारण।

कुछ कहते है छोटी बातें
कोई कहते मुझे नादान
झाड़ियो के पीछे जाकर
कब तक होगा समाधान।

बड़े बड़े महलों में बैठे
कहते तुम हो एक समान
भूल गए क्यों देना हमको
नारी का जो मान सम्मान।
सोच रहे बस देकर नारा
कर रहे क्या इंतजार
एक दिन छोड़ कर मैं भी
बैठूँगी जब अपने द्वार।

या फिर सहती रहूँ सदा
अपना ऐसा ही अपमान
और किसी दिन वहशी आगे
लूट जाए मेरा सम्मान।
बोलो कब तक सभांलू मैं
अपनी आबरू उन लोगों से
या फिर छोड़ दूँ आना विद्यालय
डर कर कुछ इन दागों से।

नहीं मंजुर छोड़ पढ़ाई
घर बैठ मैं जाऊँ
बोलो इन हालातों में मैं
विद्यालय कैसे आऊँ।
विद्यालय कैसे आऊँ।।।

दो घूँट बचपन के

सखी
याद है तुम्हें हमारा हाथों में हाथ डाले
रोज स्कूल जाना
घंटे भर की चहलकदमी
रोजाना की भागदौड़
और लौटते हुए रास्ते से
फेंकी बेकार आइसक्रीम की
नारंगी लकड़ियो को चुनना।
बालपन में बनाते थे उन
लकड़ियो से अपना घरौंदा।
उन घरौंदो को सजाना चमकीले गोटो से
और अपने हुनर पे इतराना।

सखी
याद है तुम्हें
रास्ते में आता वो बड़ा सा बगीचा
ढुंढते रहते थे घंटों वो पक्के चिक्कू
कुछ नहीं तो कच्चे ही खा कर इतराना
माँ से गले की खराश का झुठा बहाना।
वो भी जानती थी हमारी झुठी लड़ाई
मगर चुपचाप छुपा लेती हमारी लड़काई।
कच्चे चिक्कू के बाद गले में अटकता पानी
माँ सब जानती थी अपनी शैतानी

सखी
गोटो किनारों से सजाए
बैठी हूँ अपना घरौंदा
बस आती नहीं आँखों में
वो पहले सी चमक
कभी यूँ ही कहीं से आ कर दिखा दो
अपना भी घरौंदा
आओ पी ले हमदोनों
दो घूँट बचपन के
न जाने कब से अटका हैं गले में
वो कच्चा चिक्कू बगीये का।

परछाई

जब कभी दिल दुखा
हमेशा तुम पास आई।
समेट लिया बाहों में
अपने में मेरी परछाई।
दर्द भरे जख्मों पे
हमेशा मलहम लगाई।
टुटे दिल में भी हर बार
बहुतों बातें तुमने फुसफुसाई।
मान, अपमान, हार, जीत
न जाने कितनी पाठ पढ़ाई।
लड़ कर बहला कर
खींचती रही अपने आगोश में
मैं बेखबर दर्द के आवेश में
डुबती रही तुझमें।
सही गलत सब से बेखबर
अपनाती रही वहीं राहें।
ले जा रही थी जो मुझे अंधेरे की ओर।
साथ तेरा भी न होता वहाँ
पता था मुझे
कहाँ अंधेरे में साथ रहती
अपनी परछाई
तुम चिखती रही खींचती रही
बार बार अपनी ओर ।
और थाम कर प्यार की डोर
हर बार फिर से मैं आ जाती हूँ
इस उजाले की ओर।

धैर्य

देख रहा उल्लास से
समेटे मन के सैलाब धैर्य से बाँधे।
चमक रही है आज धरती सुनहरी चादर ताने।

अंगोछे से लपेटे आया
कुछेक हसरतें लिए।
और जला रखा है घर में उम्मीदों के दीए।

तैयार है गठ्ठरें कट कर सारी
सारा खेत हो गया खाली।
दे रही है धरा आशिष ढेरों, लहरा कर अपनी अनगिनत बाली।

लाद कर गाड़ीयों पे
चला सब मोल करने
शायद भर जाए दामन पूरे हो अधुरे सपने।

उससे पहले वहाँ भी महाजन
देर न की आने में।
एक एक बोरी बिकी, बस उसके सुद चुकाने में।

खाली हाथ खाली झोली
लौट गया हुआ लाचार
फिर से बोने होंगे सपने, शायद जो हो पूरे अगली बार।

अपने सपने जीने को वो
जुट जाएगा मन को मार
सोएगा हर रोज रात अब सब्र का घूटँ पी उसका परिवार।

रिश्ते

बंद मुट्ठी से अकसर
फिसल कर बिखर गए।
जब कभी सहेजा
पहुँच से निकल गए।
न जाने कितने जतन
कितने दर्द सह कर समेटता रही।
टुटे हिस्से को
सहेजा हमेशा
हर बार खुद को बिखेरती रही।

जब कभी ऐसा लगा
लोग क्या कहेंगे
अपने मान को दाँव पर लगा
पढ़ दुनियादारी की भाषा
दम तोड़ने से उन्हें बचाती रही।
हाँफते ,लजरते, बिखरते खुद को
कई बार झुठा दिलासा देती रही।

रेत बन वो हर बार फिसलते रहे।
छोड़ा जब जकड़ना उन्हें
खोल कर बंद मुट्ठी
सभी रिश्ते बन तितलीयाँ उड़ गए।
दिखाई दिए कई रंग
लाल, पीला, नीला, सफेद
चौंकाते रहे मुझे अक्सर।
छोड़ गए कुछ सदा के लिए
तो कुछ हथेलियों पर बैठ गए पास आकर।

खुशबू

हाँ
न जाने,
क्यों ढुढती हूँ मैं
वो अपनी पुरानी खुशबू
मैंने खुद ही जब बंद कर दी
आबोहवा आनी कोई।
लेकर अपने कंधों पर
वो घिसीपीटी रिवाजों को
ढ़ोती आ रही हूँ बरसों से।
लेकर नहीं जन्मी थीं
अपने अंदर की सड़न।
वो कब की दबी बासी
गीली फूलों की महक
समायी है अब नथुने में मेरे।
अब तो आदत है
इस सड़न की मुझको
ताजे फूलों की खुशबू से
न जाने क्यों उबाई आती है।
मेरे शव पर भी न चढ़ाना
कोई फूल खुशबू के
मेरे नथुने में अब न कोई
खुशबू
समायेगी।
खुद को देना हो तसल्ली अगर
बेशक फूलों से सजाना जनाजा मेरा।

सहेजता पल

यूँ ही खड़ा है वो
आज भी मेरे आंगन में विशाल बरगद का पेड़।
जाने कितने अनमोल पल
रखे है उसने छुपा के पत्तों में संभाल के।
जब कभी झुलती, डालियों से गिरती थी मैं
वो कर के ठण्डी हवा मलहम फेरता जख्मों पर।

वो आज भी खड़ा है अपनी बाहों को फैलाए
मेरे इंतजार में कई बार उसको देखा है
रात के अंधेरों में पुकारते
शायद आज भी वो कर रहा हैयाद मुझको।
कुछ आँसू गम और खुशी के
कुछ अरमां जो न खिले
आधे अधुरे किस्से या दिल के टूटे हिस्से
सभी को दबा रखा है उसकी जड़ों में।

मैं जब भी जाती हूँ पास उसके
महसूस होता है प्यार उसका
मेरी गुड़ियाँ की चुन्नर लपेटे
दिलाता है याद मेरे बचपन की
चोटी का लाल फीता अब भी
उसने समेट रखा है खुद में
हरी चूड़ियों के टुकड़े आज भी
गड़े है जड़ो में उसके
जाने कितने भूले बिसरे पल
उसने सहेज रखें है हिफाजत से।

मैं हर बार जाती हूँ पास उसके
कुरेद कर कुछ मिट्टी जड़ो से
फिर से उन पलो को जीती हूँ
वापसी में दबा के कुछ नए जज्बात
मैं फिर से छोड़ आती हूँ उसे तन्हा।
जाने और कितने बरस और वो सहेजता
रहेगा मेरे जज्बात।

मुझे समझ नहीं आता

मेरे नाराज होने की
कोई बात नहीं
बात है कि तुम क्या सोचते हो।
अब मैं पहले की तरह नाराज
नहीं होती
न ही लड़ती हूँ तुमसे
तुम्हारी हरेक बातें
चुपचाप सुन लेती।
मेरी चुप्पी को बड़े
आराम से समझदारी का
चौंगा पहना दिया तुमने
जो घर मुझसे लड़ने पे
नरक लगता था
वो अब स्वर्ग लगता हैं तुमको
मैं सोचती हूँ कि
मैं तारीफ करूँ अपनी
तुम्हें खुश रखने की
या खुद को तकलीफ देने के लिए
अपने आप से नाराज हो जाऊँ।

मेरी नाराजगी

मैं चाहती हूँ तुमसे
नाराज होना।
मैं चाहती हूँ तुमसे
यूँ रूठ जाना।
चाहती हूँ कि तुम आओ
मुझे मनाने।
चाहती हूँ कि तुम कोशिश करों
मुझे समझने।
चाहती हूँ कि तुम मेरी पीड़ा
मेरी तकलीफों को जानो।
एक बार आ कर पास मेरे
मेरे हालात को जानो।

मैं बदल गई हूँ
पहले की तरह नहीं रही
ऐसी बहुत सी बातें हैं
वो सब
तुम सुनों जो मैंने नहीं कही।

अब बस मेरे मुस्कुराने को
मेरे खुश होने से मत जोड़ों
होंठों पे चिपकी बेरंग हँसी
से मेरी खुशियाँ मत तौलौ।
मैं आज भी इसी इंतजार में
जी रही हूँ कि शायद तुम समझो
मैं कितनी बदल गई हूँ
एक बार दिल में झाँक के देखो
मैं पहले क्या थी और अब
कितनी बदल गई।

फिर एक बार

रंगीन फिजा से
एक बार चुरा कर
थोड़ा सा गुलाल
भर ली अपनी झोली।

केसरी रंग की
सौंधी महक
अपने सांसो में
घोली ।

झूमा के धड़कन
तेरे थापो पे
फिर से
दिल को दिखाया
जीने का नया अंदाज।

तुम बदलते रहो
ऐ जिंदगी
मैं सीखती रहूँगी जीना
ता उम्र ।

यूँ ही
दिखा के नखरें
मजबूर करना मुझको
बदले अपने अंदाज से
खुद को
समझाने की।

आखिर कब तक

आखिर कब तक
धर के तेरा रूप
निभाती रहूँ
वो सारी जिम्मेदारी
आखिर कब तक
भागोगे तुम अपने आप से।
रात, दिन तुम्हारे भेष बदल
देती रही दुनियाँ को छलावा
आखिर कब तक
आँखों के आँसू को
पत्थर बना बंद रखूँ
अपनी दिल की जुबान।
आखिर मैं भी चाहती हूँ
सजुँ पहन कर चुड़ियाँ
और सुना सकूँ उसकी खनक
जी सकूँ अपनी जिंदगी
बन तुम्हारी अर्धांगनी पाऊँ वो सम्मान।
मुझसे न सही
कम से कम खुद से तो झूठ मत बोलो।
थक गई हूँ दे कर दिल को दिलासा
कहीं न कहीं से
थोड़ा सा ही बचा है नारीत्व मुझमें
बस एक बार भर के बाहों में
थाम के हाथ आ कर बोल जाओ
बस हो गया
मेरा रूप धर कर घर को संभालना
अब छोड़ दो जबरदस्ती का चोला पहनना
मैं आ गया हूँ तुम्हें देने तुम्हारे हिस्से का मान।

कहाँ जा रही है औरतें

आज फिर बैठेगीं कस्बे की औरतें
आकर झुण्ड में अपने
शाम को खाने के बाद
सभी होती इकट्ठी
फिर कुछ देर बाद
गुनगुनाएगीं हंसी
और कुछ
सिसकियाँ भी तैर जाएंगी।

बातें कुछ परोसन की या
फिर अपने घर वालों की
सभी के दर्द
एक एक कर
परोसे जाएंगे सामने
कभी मिर्ची लगेगी किसी को
किसी को
चटपटाती चाट सा रस मिलेगा
बड़ी खुबी से
ओढ़कर पैबंद भरी चादर
धीरे से दूसरों को
नंगा किया जाएगा।

वहीं कुछ दूर बड़ी इमारत में
होकर इकट्ठी औरतें
झूमती डाल के गैरों के गले में हाथ
अपनी आधुनिकता का

ओढे लिबास
बड़ी ही बेपरवा हो कर
इस दुनियां से
बोलती आदर्श भरी बातें
खुशबू से नहा कर
अपनी गंध को छुपाए
वो आज फिर कर रही हैं बातें।

चली जाएगी दोनों तरह की औरतें
समेटे कुछ खुशियों को भर
कोई फिर पसर जाएगी
चादरों के संग बिस्तरों पर
और दुसरी पाने को अतृप्त अभिलाषा
चुकाएगी अपनी ही काया।

दोनों ही हालातो में औरतें
ढुढती है और जानने की कर रही कोशिश
है आखिर किस तरफ जा रही है वो
आज भी पीस रही है वो
या कि खुद को ही छल रही है वो।

बोझ

सुनाया भी दिखाया भी
जताया भी डराया भी
कभी जोर से कभी प्यार से
बताया इन रास्तों की मंजिलों
की दास्तां।
छोड़ दो ये रास्ते
चरित्र जिससे हनन हो।
आओ मैं साथ चलती
जिंदगी की डगर पर
मिले तुम्हें खुशी भरा सफर।
वो देखता रहा मुझे
एकटक निगाहों से
जैसे तौल रहा था
मेरी बातों को ।
लगा जैसे उठेगा
साथ चल देगा मेरे
समझ में आ गई हो
बातें जो मैंने कहीं।
थोड़ा झुक कर उठाया
अपना वो झोला
भरी थी जिसमें
उसने चुरा कर पटरी से
कोयलें की बोरी।
झटक कर अपने चेहरे को
नचा कर अपनी पुतली।
वो बोला क्या हुआ है फायदा
उठा कर बोझ किताबों का

भला कैसे बताऊँ जिंदगी
के हिसाबों का।
दिखाती हो क्यों ऐसे स्वप्न
जो टुट है जाते
पेट की आग मे सब किताबें
झुलस के जल है जाते
अगर करना है कुछ तो
मेरे बापू का भला कर दो
किसी भी तरह उनकी
शराबी लत छुड़ा दो।
जाऊंगा मैं भी विद्यालय
जो बापू घर संभाले।
पढ़ाई से सुधरूंगा
चाहे दुनिया मुझे आजमाले।
मैं देखती रही उसे वहाँ से जाते
बड़े ही बेबसी से फिर झोला को उठाते
चीड़ के फट गया जैसे मेरा सीना
दिखाया जैसे मुझको कोई आईना
उन बच्चों ने जब उठा रखी
हम बड़ों का बोझ
कैसे कंधों पर मैं डालूँ
किताबों का ये भारी बोझ।

जन्नत

आज भी झेलम में पड़ी होंगी
जो बजती थी चूड़ियाँ कलाईयों पे कभी।
झुलता था बाजुओं मे मेरे
आज भी लिपटा होगा दुपट्टा वहीं पे कहीं।

चौंक कर देखतीं हूँ उधर
जब कभी कानों में सुनती हूँ पश्तो या मीरपुरी।
एक अनचाहे दर्द में उतर जाती हूँ और
उसकी आँखों के आँसू उतर जाते हैं मेरी आँखों में।

अब तो चलती भी नहीं अपनी कश्ती कोई
कोई तरन्नुम सी सौगात भी नहीं
आँसू जो डाल दूँ झेलम में सभी
वो बचे भी नहीं अब मेरी आँखों में।

खुद रही है लंबी सुरंगे हमारे ही नीचे
गिर रहीं है लाशें कई उनको बचाने।
नाचते है शुतुरमूर्ग बन कर जहाँगीर सभी
और बाँट लेते है सभाओं की सब सीटें।

क्यों नहीं आते उनकी आँखों मे वो सपनें
जो धधकती हैं बरसों से मेरे सीने में
आज भी दिखती हैं वो पेड़ों पे टंगी नंगी लाशें
और सड़कों पे बिछी सम्मानें।

कौन है हम ये नहीं भूलेगें कभी
और याद तुमको भी तो होगा ही सभी
भले आज कह लो विस्थापित
शरणार्थी या पलायित ही हमें।

बदले है अपने सभी के चेहरे सियासी रंगों में
जैसे उनके तन में लहू है ही नहीं।
क्यों आज खड़े है हम हाशिए पे और उनमें
कोई खुद्दारी नहीं।

उन आततायी कबीलों को हटा कर देखो
दौड़ कर अपनी जमीन पर आ जाएंगें हम।
बस एक बार मेरे दर्द भी जी कर देखो ।
जन्नत तो दिल में लिए फिरते हैं हम।

प्रार्थना

हे प्रभु
हूँ झुका मैं चरणों में
लिए अपना शीश
बन्द कर सभी इन्द्रियाँ
गाऊँ बस यह गीत
बन के काले मेघ सा
आत्मा भारी
बरसुँ तेरे चरणों मे
होऊँ खाली।
लौटे भटके मन को
मिला जैसे ठौर
पता नहीं करूँ कैसे
प्रार्थना मैं और।
सागर से निकले कोई मोती
जिस लगन से
हे प्रभु लगा हूँ बस मैं
उस जतन से।
बुझ न जाए यह दिया
बेरहम हवा से
दर्द खत्म हो जाए
ऐसी दवा दें।
तुमने सब कुछ दे दिया है
आकाश,प्रकाश,तन,मन,प्राण
जल के भष्म बन तेरे लौ में
उड़ जाए द्वेष बनो मेरे त्राण।

लड़कियाँ या मछलियाँ

देखा है तुमने कभी
गाँव के पास के पोखर में
तैरती अनगिनत मछलियाँ
एक छोर से दूसरी तरफ
बस नाचती एक दायरे में
निकल जाए वहाँ से तो मर जाएगीं वे ।
और देखा वहाँ पानी में तैरता झुण्ड लड़कियों का
खिलखिलाती ,गुनगुनाती एक कविता जैसी
उनमुक्त आजाद पवन सी
बदल जाती है धीरे धीरे
सारी लड़कियाँ मछलियों में।
बंध के रह जाती किनारों से
कोई समझाए उन्हें
बहुत अंतर है उनमें और मछलियों में
मरेगीं नहीं जो कभी तोड़ बाँध बाहर आए
एक नए परिवेश और नए हालात में
थोड़ी देर छटपटाएगीं
मगर आजादी की हवा में सांस लेना सीख लेंगी।
सीख लेंगी अपने लिए चलना, अपने लिए जीना।
मगर कुछ जानने से पहले ही फँसा कर जाल में उनको
फेंक कर एक पोखर से दूसरे पोखर जीने को
और अगर रास्ते में मरेगीं वो बदकिस्मत
सजेगी फिर किसी के निवाले में।
यहाँ ऐसा तब तक चलता रहेगा
कि जब तक मछलियों में
बदलना थमता नहीं हैं उन लड़कियों में।

इजहार

जब भी कभी देखती हूँ
हसरत भरी निगाहों से
शायद आज तुम करों इजहार
मेरे बोलने से पहले तुम
देते सफाई हर बार
दो बदन एक रूह
दो जिस्म एक दिल
अलग भावनाएँ एक ज़ज्बात
है क्या जरूरत बताने की
जताने की या बताने की
अपने मौहब्बत की दांस्ता।
है क्या जरूरत फिर से
एक बार अपने प्यार से रूबरू होने की ।
जानती मैं भी हूँ और तुम भी
हम जान जाते है
दिले दिमाग की हालत एक दूसरों की ।
मैं पूछती हूँ बस एक सवाल
तो होते क्यों ख़फा
मेरी गलतियों पे चिल्ला कर
क्यों उठा लेते ये घर दीवार
उस समय भी
मेरे हृदय को अपना समझ
क्यूँ करते नहीं माफ
जब नाराजगी आती है जताने तो
सीखों न प्यार जताना एक बार।

व्यक्तित्व दर्पण

नाम - शुभ्रा झा
जन्म - 03.07.1980, बेतिया (बिहार)
माता - श्रीमती माधुरी मिश्रा
पिता - स्व. श्री गोलोकनाथ मिश्रा
पति - श्री संतोष कुमार झा
शिक्षा - एम.एस.सी (शुक्ष्म जीव विज्ञान), बी.एड.
निवास - 502, राधिका अपार्टमेंट, पायोनियर हॉस्पिटल, स्टेशन रोड, सीकर (राजस्थान)
मो. - 9462632956
विधा - गद्य, पद्य
प्रकाशन - सुनहरे फूल शब्दों के (काव्य संग्रह), सृजन समीक्षा (अन्तरा-शब्दशक्ति द्वारा समीक्षा)
वुमन आवाज (नारी से नारी तक-साझा काव्य संग्रह)
भारत के युवा कवि एवं कवयित्रियाँ (साझा काव्य संग्रह)
आधी आबादी की गूँज (साझा काव्य संग्रह)
एवं लोकजंग, अमर उजाला एवं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित।
सम्मान - कुज्ज काव्य प्रसून सम्मान, भाषा सारथी सम्मान,
वुमन आवाज अवार्ड 2018, श्रेष्ठ युवा रचनाकार सम्मान ।
उद्देश्य - आत्म विवेचना एवं संतुष्टि साथ ही साथ विभिन्न सामाजिक समस्याओं के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित करना। अपनी भावनाओं को कविता के माध्यम से व्यक्त करना।

यदि आप अंग्रेजी में हस्ताक्षर करते हैं तो निवेदन है कि 'हिन्दी में हस्ताक्षर करें', आपकी यह छोटी-सी कोशिश हिन्दी को राजभाषा से राष्ट्रभाषा बनाने में अमूल्य योगदान देगी ।

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी,
जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९,
अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com
978-93-86666-55-0
मूल्य- 55/-